

डॉ० मानसिंह दहिया 'आनन्द' के काव्य में प्रयुक्त विभिन्न अर्थालंकार

राजबीर, शोधार्थी,

हिन्दी विभाग, श्री खुशाल दास विश्वविद्यालय

हनुमानगढ़ (राजस्थान)

डॉ अरविन्द कुमार, निर्देशक

हिन्दी विभाग, श्री खुशाल दास विश्वविद्यालय

हनुमानगढ़ (राजस्थान)

प्रस्तावना:

अलंकारवादी आचार्यों ने अलंकार को ही काव्य का सबसे प्रमुख तत्त्व माना है। उनके अनुसार जिस प्रकार कामिनी का मुख सुन्दर होते हुए भी आभूषणों के बिना सुशोभित नहीं होता, उसी प्रकार कोई काव्य में अलंकारों के बिना सुशोभित नहीं होता है। इन अलंकारवादी आचार्यों के अनुसार काव्य में सौंदर्य के तथा रमणीयता के जितने भी तत्त्व हैं, वे सभी अलंकारों में परिगणित किये जा सकते हैं। आचार्य वामन ने तो यहाँ तक कह दिया कि काव्य की ग्राह्यता केवल अलंकारों के द्वारा ही की जा सकती है। इस बारे में वे स्पष्ट रूप से कहते हैं कि सौंदर्य ही अलंकार है।

काव्य ग्राह्यमलंकारात्। सौंदर्यलंकारः।¹

साहित्य में अलंकारों का प्रचलन प्राचीन काल से ही प्रचलित है। आरम्भ में इन अलंकारों की संख्या सीमित थी। आचार्य भरत ने तो अलंकारों की संख्या केवल चार ही मानी है। जैसे—जैसे काव्य—विधा का विकास होता गया, वैसे—वैसे ही अलंकारों की संख्या भी बढ़ती गई तथा इन अलंकारों का वर्गीकरण भी कर दिया गया। वर्तमान काल में इन अलंकारों को तीन वर्गों में विभाजित किया जाता है।

अर्थालंकार क्या हैं?

जिन अलंकारों में अर्थ के आधार पर चमत्कार उत्पन्न किया जाता है, या अर्थ के आधार पर काव्य का सौंदर्य बढ़ाया जाता है, उन्हें अर्थालंकार कहा जाता है। अर्थालंकारों को शब्दालंकारों से अधिक महत्व दिया जाता है, क्योंकि इन्हीं अलंकारों के द्वारा काव्य का वास्तविक आस्वादन किया जाता है। इस संदर्भ डॉ० संसार चन्द्र कहते हैं कि—“शब्दालंकारों की अपेक्षा अर्थालंकारों का अधिक महत्व होता है। वस्तुतः शब्दालंकार नाद—सौंदर्य के ही प्रतिपादक हैं। इससे काव्य में केवल श्रुति मधुरता आती है। अर्थालंकार काव्य के वास्तविक सौंदर्य में विशेष योगदान देते हैं। इनके द्वारा अभिव्यक्ति में सजीवता आती है।”²

अर्थालंकारों के विषय में ——— कहते हैं कि—“जहाँ अर्थ में चमत्कार पाया जाये, वहाँ अर्थालंकार माना जाता है। इसका तात्पर्य यह है कि यह चमत्कार निकालकर यदि उस वाक्य का केवल तात्पर्य कहा जाये, तो वह वाक्य बिलकुल सादा और आरोचक हो जायेगा। जैसे कहना यह है कि अमुक व्यक्ति बड़ा विद्वान है, तो इस वाक्य को सीधे यूँ न कहकर कि अमुक व्यक्ति बड़ा विद्वान है यों कहें कि—

(क) अमुक व्यक्ति दूसरा बृहस्पति है।

- (ख) अमुक व्यक्ति की विद्वता से लज्जित होकर बृहस्पति पीले हो गये हैं।
 (ग) अमुक व्यक्ति बृहस्पति के समान हैं।
 (घ) अमुक व्यक्ति की विद्वता से हारकर बृहस्पति दिन में अपना मुँह नहीं दिखलाते।
 (ङ) अमुक व्यक्ति मनुष्य नहीं बृहस्पति है इत्यादि।

तो इस प्रकार के कथनों में कुछ विशेष चमत्कार आ जाता है। इसी चमत्कार को अर्थालंकार कहते हैं।³

अर्थालंकारों और शब्दालंकारों में अन्तर

आचार्य मम्मट में अलंकार की परिभाषा देते हुए कहा है कि

उपकुर्वन्ति तं सन्तं ये अंग द्वारेण जातुचित्।

हारादिवदलंकारास्ते ऽनुप्रासोपमादयः।⁴

अर्थात् जो (धर्म) अंग अर्थात् अंगभूत शब्द और अर्थ के द्वारा (उसमें उत्कर्ष उत्पन्न कर) विद्यमान होने वाले (सन्तं=यदि वह है तो) उस (अंगी) रस का हार इत्यादि के समान कभी (नियम से कहीं) उपकार करते हैं, वे अनुप्रास तथा उपमा आदि अलंकार कहलाते हैं।

कुछ विद्वानों ने इन अलंकारों को वर्गीकृत करने का सबसे पहला प्रयास रुद्रट ने किया। इसके पश्चात् रुय्यक तथा अन्य आचार्यों ने इस परम्परा को आगे बढ़ाया। आधुनिक समय में प्राय सभी विद्वानों ने अलंकारों को तीन वर्गों में विभाजित किया है। परन्तु यहाँ हम अर्थालंकारों तथा शब्दालंकारों में मुख्य अन्तर को विवेचित करने का प्रयास करेंगे।

सामान्यतः जहाँ पर शब्द के माध्यम से काव्य का सौंदर्य बढ़ाया जाये, वहाँ शब्दालंकार तथा जहाँ अर्थ के माध्यम से काव्य का उत्कर्ष बढ़े, वहाँ अर्थालंकार बताते हैं—“शब्द का आधार ध्वनि और अर्थ है। अलंकारों का वर्गीकरण भी ध्वनि और अर्थ के अनुसार ही किया जाता है। ध्वनि पर आश्रित अलंकार शब्दालंकार और अर्थ को लेकर प्रयुक्त होने वाले अर्थालंकारों की कोटि में आते हैं।”⁵

अर्थालंकारों तथा शब्दालंकारों में दूसरा सबसे बड़ा अन्तर इनकी संख्या को लेकर है। शब्दालंकारों की संख्या सीमित है। शब्दालंकारों की संख्या दो से लेकर सात ही मानी गई है। परन्तु अर्थालंकारों की संख्या को सीमित करना संभव नहीं है। यही कारण है प्रत्येक अलंकारवादी आचार्य ने इन अलंकारों की भिन्न-भिन्न संख्या बताई है।

अर्थालंकारों और शब्दालंकारों में एक अन्य अन्तर यह भी है कि कुछ आचार्यों के अनुसार अनुप्रास तथा यमक आदि शब्दालंकार काव्य के रस में व्यवधान उत्पन्न करते हैं। इस संदर्भ में आनन्दवर्धन कहते हैं—

ध्वन्यात्मभूते शृंगारे यमकादि निबन्धनम्।

शक्तावपि प्रमादित्वं विप्रलम्भे विशेषतः।⁶

आनन्दवर्धन के अनुसार किसी काव्य में अलंकारों का अलंकारत्व तभी होता है, जब ये अलंकार रस या भाव आदि के अनुसार नियोजित किये जाते हैं। वस्तुतः शब्दालंकारों के रसानुकूल या भावानुकूल निबन्धन के लिए अधिक प्रयत्न नहीं करना पड़ता जबकि अर्थालंकारों के औचित्य पूर्ण निबन्धन के लिए अनेक नियमों का प्रतिपादन किया गया है।

इस संदर्भ में कुछ नियम इस प्रकार हैं—

1. अंगीभूत रस के प्रति रूपक आदि अलंकारों की विवक्षा अंग रूप में रहनी चाहिये।
2. अलंकारों की विवक्षा अंगी रूप में कभी नहीं करनी चाहिये।
3. अवसर पर इनका ग्रहण और त्याग कर देना चाहिये।
4. इनका आरम्भ से लेकर अंत तक निर्वाह करने का प्रयत्न नहीं करना चाहिये।
5. यदि आरम्भ से लेकर अंत तक इनका अनायास निर्वाह हो भी जाये, तो भी इनको अंगीभूत रस के अंग के रूप में तथा आकृषक के रूप में ही रखना चाहिये।⁷

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि जहाँ शब्द में सौंदर्य हो वे शब्दालंकार कहलाते हैं तथा जहाँ अर्थ में सौंदर्य विद्यमान हो, उन्हें अर्थालंकार कहा जाता है। शब्दालंकारों की संख्या सीमित है जबकि अर्थालंकारों की संख्या निरन्तर बढ़ती रहती है। किसी भी काव्य का वास्तविक सौंदर्य शब्दालंकारों में न होकर अर्थालंकारों के द्वार ही प्रतिपादित होता है। यही कारण है कि प्रायः सभी अलंकारवादी आचार्यों ने शब्दालंकारों की अपेक्षा अर्थालंकारों को अधिक महत्व प्रदान किया है। इसलिये अर्थालंकारों के औचित्यपूर्ण निबंधन के लिए अनेक प्रकार के नियम भी बनाये गये हैं।

अर्थालंकारों का सौंदर्य

अलंकार शास्त्र के सभी आचार्य इस तथ्य पर एकमत हैं कि चारुतापूर्ण उक्ति ही अलंकार है। जब इस उक्ति के अर्थ में सौंदर्य विद्यमान हो, तो इसी सौंदर्य को वास्तविक सौंदर्य माना जाता है। इस संदर्भ में डॉ० संसार चन्द्र लिखते हैं कि—“शब्दालंकारों की अपेक्षा अर्थालंकारों का महत्व अधिक होता है। वस्तुतः शब्दालंकार नाद-सौंदर्य के प्रतिपादक हैं इससे काव्य में केवल श्रुति मधुरता आती है। अर्थालंकार काव्य के वास्तविक सौंदर्य में विशेष योग देते हैं। उनके द्वारा अभिव्यक्ति में सजीवता आती है।”⁸

अर्थालंकारों की अलंकारत्व की एक अन्य विशेषता यह है कि एक शब्द के स्थान पर यदि उसी अर्थ का बोध कराने वाला कोई अन्य शब्द रख दिया जाये, तो अर्थालंकारों का सौंदर्य यथावत् बना रहता है। अर्थालंकारों की इसी सौंदर्यात्मक विशेषता का वर्णन करते हुए डॉ० शोभाकांत मिश्र कहते हैं कि—शब्दालंकार के विपरीत अर्थालंकार शब्द के अर्थ पर आश्रित रहता है। अतः एक शब्द की जगह उसी अर्थ के वाचक दूसरे शब्द को रख देने पर भी अलंकारत्व की हानि नहीं होती। कारण यह है कि शब्द के पर्याय-परिवर्तन किये जाने पर भी अर्थ तो वही रह जाता है। अतः अर्थ में परिवर्तन नहीं होने के कारण अर्थाश्रित अलंकार का उस शब्द-परिवर्तन से कुछ नहीं बिगड़ता। इसलिए पर्याय-परिवर्तनासहत्व शब्दालंकार का तथा परिवृत्ति-सहत्व अर्थालंकार का व्यावर्तक है।”⁹

संदर्भ ग्रंथ-सूची—

1. काव्यालंकार सूत्र, वामन, 1.1.1.—1.1.2
2. हिन्दी छंद अलंकार: एक विवेचन, डॉ० संसार चन्द्र, पृ०—136
3. अलंकार मंजूषा, लाला भगवादीन, रामसहाय बुक सेलर, विद्या प्रचारक, बुक डिपो, गया, सप्तम् संस्करण, संवत्—1990, पृ०—2
4. काव्य प्रकाश, मम्मट, पृ०—409
5. हिन्दी छंद अलंकार: एक विवेचन, डॉ० संसार चन्द्र, पृ०—135, 136

6. ध्वन्यालोक, आनन्दवर्धन, 2.4
7. अलंकार शास्त्र का इतिहास, डॉ० कृष्ण कुमार, पृ०-278
8. हिन्दी छंद अलंकार: एक विवेचन, डॉ० संसार चन्द्र, पृ०-136
9. अलंकार धारणा: विकास और विश्लेषण, डॉ० शोभाकांत मिश्र, पृ०-366
10. अलंकार शास्त्र का इतिहास, डॉ० कृष्ण कुमार, पृ०-27